

संयुक्त राष्ट्र दिवालिया होने के कगार पर

● शशिधर खां

संयुक्त राष्ट्र महासचिव बुतरस घाली पिछले एक वर्ष से सभी सदस्य देशों को इस विश्व पंचायत के घोर वित्तीय संकट की ओर बार-बार सचेत कर रहे हैं, लेकिन किसी भी देश ने उनकी बात को गंभीरता से नहीं लिया। सबसे हल्के ढंग से जिस देश ने लिया वह अमरीका है और यह भी एक विडंबना ही है कि उसी की बदौलत संयुक्त राष्ट्र की सारी एजेंसियां काम करती हैं। उसकी मुख्य वजह है कि संयुक्त राष्ट्र को सबसे ज्यादा अनुदान अमरीका देता है और इसलिए संयुक्त राष्ट्र में अमरीका की तुली बोलती है। पर दुर्भाग्य की बात तो यह है कि पिछले वर्ष जब पूरे संसार में संयुक्त राष्ट्र के स्थापना की ५०वीं वर्षगांठ की चर्चा थी उस समय श्री घाली चारों तरफ धूम-धूमकर आर्थिक बदहाली का रोना रो रहे थे और खजाने में इतना भी पैसा नहीं था कि वर्षगांठ समारोह धूमधाम से मनाया जा सके। कैसा लगता है कि जब वर्षगांठ समारोह का माहौल हो और दूसरी तरफ इतने बड़े विश्व संगठन के बारे में यह चर्चा हो कि अगर इसके वित्तीय ढांचे को चरमराने से नहीं रोका गया तो संयुक्त राष्ट्र का अस्तित्व में बने रहना कठिन हो जाएगा।

आज हालात यह हैं कि संयुक्त राष्ट्र के मुख्य वित्त अधिकारी जोसेफ कोनर को साफ-साफ कह देना पड़ा है कि अब अगर सदस्य देशों ने अपने बकाये का भुगतान शीघ्र नहीं किया तो वह

कि इसकी किसी भी अंतरराष्ट्रीय मामले में निर्णायक भूमिका हो।

वास्तव में संयुक्त राष्ट्र का गठन ही दोषपूर्ण ढंग से हुआ। इसलिए आज भी विश्व स्तर पर इसकी छवि उतनी अच्छी नहीं है, जितनी होनी चाहिए। वीटो का अधिकार और सुरक्षा परिषद की सदस्यता में 'जिसकी लाठी उसकी भैंस' की कहावत चरितार्थ करते हुए ताकतवर देशों ने मनमानी की, जिसे वे आज ५० वर्ष के बाद बदलती परिस्थितियों के मद्देनजर भी छोड़ने को तैयार नहीं हैं। सुरक्षा परिषद की सदस्यता के लिए भारत की गुहार बार-बार अनसुनी की जा रही है और जापान के बारे में अमरीका विचार कर रहा है क्योंकि उससे अमरीका के व्यापारिक हित जुड़े हैं।

शांति स्थापित करने के लिए सैनिक भेज दिए जाते हैं जो अपनी जान भी नहीं बचा पाते और उन्हें वापस लौटना पड़ता है। सोमालिया और रवांडा ताजा सबूत हैं। इसका कारण है—संयुक्त राष्ट्र शांति बलों की कमजोरी और इनके प्रति अविश्वास।

पर अब तो इस अभियान पर भी संकट है, क्योंकि संयुक्त राष्ट्र का सबसे ज्यादा खर्च सैनिकों पर है, जो सालाना ३.३ अरब से भी अधिक हो जाता है और आज आर्थिक दिवालियापन के कगार पर खड़ा संयुक्त राष्ट्र अपना शांति



दिन करीब है जब संयुक्त राष्ट्र के कोच में अपने कर्मचारियों को वेतन देने के लिए पैसे नहीं होंगे। विश्व स्वास्थ्य संगठन, अंतरराष्ट्रीय श्रम संगठन, यूनेस्को और संयुक्त राष्ट्र शरणार्थी आयुक्त के कार्यालयों के कामकाज यू भी अर्थाभाव के कारण लचर ढंग से चल रहे हैं। जबकि अमरीका के कहने पर काफी कर्मचारियों की छ्टनी की गई है। सबसे बड़ा अनुदानदाता होने के कारण सबसे ज्यादा बकाया अमरीका पर था और हर किस्त देने से पहले घौस देने के अंदाज में अमरीका सुझाव देने से बाज नहीं आता।

साल भर से अमरीकी राष्ट्रपति बिल क्लिंटन धमकी दे रहे हैं कि संयुक्त राष्ट्र का खर्च कम किया जाए, वरना इतने विशाल जहाज का खर्च चलाना संभव नहीं हो पाएगा और वे अपने अनुदान में कटौती करते जाएंगे। जबकि घाली ने १९९२ से ही अपने संगठन में आर्थिक सुधार का अभियान छेड़ रखा है। १९९२ में संयुक्त राष्ट्र के जिनीवा कार्यालय में एक बैठक के बाद सर्वप्रथम उन्होंने ही कहा कि इस कार्यालय के हजारों कर्मचारियों के पास करने के लिए कुछ नहीं है और उनके वेतन व अन्य सुविधाओं पर किया जा रहा खर्चा फिजूल है। जिनीवा के अधिकारियों को यह सुनकर बड़ा धक्का लगा, लेकिन वे सब समझ रहे थे कि दिन व दिन बिगड़ती आर्थिक हालत के कारण महासचिव को ऐसा बोलना पड़ रहा है, इसलिए कोई खास प्रतिक्रिया नहीं हुई।

१९४५ से सिर्फ ५० देशों को लेकर शुरू किए गए संयुक्त राष्ट्र के कर्मचारियों की संख्या उस समय १५० थी और आज सिर्फ न्यूयार्क स्थित मुख्य कार्यालय में ही १५,००० कर्मचारी कार्यरत हैं। कुल कर्मचारी करीब ५४ हजार हैं। सदस्य देशों की संख्या भी बढ़कर १८५ हो गई है। लेकिन जैसे-जैसे यह संगठन विशाल होता जा रहा है इसकी प्रासंगिकता पर अंगुलियां उठने लगी हैं। संयुक्त राष्ट्र की स्थापना एक सशक्त निकाय के रूप में मुख्य रूप में अंतरराष्ट्रीय शांति के लिए की गई थी, लेकिन पिछले ५० वर्षों में शांति प्रयासों के क्षेत्र में संयुक्त राष्ट्र का खोखलापन उजागर हो चुका है। हमारे पास ऐसे उदाहरणों की लंबी फेहरिस्त है जब यह विश्व संगठन कुल मिलाकर अमरीका और उसके पिछलगू पश्चिमी देशों की कठपुतली बन कर रह गया और बाकी सदस्य देशों की कुछ नहीं चल पायी। अमरीकी रणनीति के तहत संयुक्त राष्ट्र को इतना मजबूत कभी बनने ही नहीं दिया गया

अभियान कायम रखने में अक्षम साबित हो रहा है

क्लिंटन से बुतरस घाली ने कई बार अपना अंशदान देने का आग्रह किया और उनके आश्वासन पर ही १९९६ को 'अंतरराष्ट्रीय गरीबी उन्मूलन वर्ष' घोषित कर दिया, लेकिन अब इस कार्यक्रम के खटाई में पड़ने की संभावना लग रही है। ७० सदस्य देशों पर बकाये की रकम तीन अरब डॉलर से ज्यादा है, जिसमें अकेले अमरीका को १.६ अरब डॉलर का भुगतान करना है। मुख्य वित्त अधिकारी के मुताबिक समय पर अनुदान की राशि देने वालों में गरीब और विकासशील देशों की संख्या ज्यादा है। अमरीका इतने आग्रह के बावजूद पांच किस्तों में अनुदान की राशि देने को राजी हुआ है और पहली किस्त जुलाई से पहले मिलने की उम्मीद नहीं है, जबकि सबसे ज्यादा खर्च वाला 'गरीबी उन्मूलन अभियान' की सफलता अमरीकी मदद पर ही टिकी है। ये किस्तें पांच वर्षों में देय होंगी।

हार-थककर बुतरस घाली ने आर्थिक संकट पर विचार करने के लिए संयुक्त राष्ट्र महासभा का विशेष अधिवेशन बुलाने का ऐलान कर दिया है। उसके पहले खर्च में कटौती के लिए वह अपनी ओर से हर संभव कदम उठा चुके हैं। राजनयिकों और विशेष दूतों के यात्रा व अन्य भत्तों में कटौती कर दी गई है। खरीद, सम्मेलनों और देर रात तक चलने वाली बैठकों में कमी कर दी गई है।

बुतरस घाली ने इस बात के लिए अफसोस जाहिर किया कि प्रक्षेपास्त्रों, बारूदी सुरंगों और परमाणु हथियारों पर बेहिसाब खर्च करने वाले बड़े औद्योगिक देश नेक कार्यों के लिए बने संयुक्त राष्ट्र के धराशायी होने का इंतजार कर रहे हैं।

सबसे बुरी स्थिति है—विश्व स्वास्थ्य संगठन की। इसके अध्यक्ष जापान के हिरोशी नकाजीमा ने १९९६-९७ के बजट में नौ प्रतिशत बढ़ोतरी का आग्रह किया जिसे किसी भी देश ने गंभीरता से नहीं लिया। इसके चलते एड्स और मलेरिया जैसी जानलेवा बीमारियों से अंतरराष्ट्रीय स्तर पर निजात पाने में दिक्कत आ रही है।

१९८४ में अमरीका और ब्रिटेन द्वारा यूनेस्को से अपने को अलग कर लेने से इस एजेंसी के अधिकांश कार्यक्रम बंद हैं। दूसरी ओर बाल श्रम उन्मूलन का बीड़ा उठाने वाला श्रम संगठन अपने १८०० कर्मचारियों को नियमित वेतन देने को लेकर चिंतित है। □